विपश्यना

साधकों का मासिक प्रेरणा पत्र

बुद्धवर्ष २५४८, मार्गशीर्ष पूर्णिमा, २६ दिसंबर, २००४ वर्ष ३४ अंक ७

धम्मवाणी

"यो च पुब्बकारी, यो च कतञ्ञू कतवेदी – इमे द्वे पुग्गला दुल्लभा लोकस्मिं।"

– पुग्गलपञ्ञत्ति –८३ (दुकपुग्गलपञ्ञत्ति)

जो पूर्वकारी (परोपकार करने वाले) हैं और जो कृतज्ञ, कृतवेदी अर्थात उपकार को स्मरण रखने वाले हैं –ये (इस प्रकार के) दो पुरुष संसार में 'दुर्लभ' हैं।

म्यंमा (बर्मा) ऋणमुक्त हुआ, विपश्यना घर लौटी

('म्यंमा द्वार' के उद्घाटन पर पू. गुरुजी का सार्वजनिक प्रवचन)

अक्तूबर २७, २००४

(क्रमशः)... धर्मप्रेमी सज्जनो-सन्नारियों!....

यहां आने पर दस दिन भी नहीं बीते कि पहला शिविर लग गया। एक भाई आगे आया कि मैं शिविर लगाता हूं और किसी धर्मशाला में शिविर लगा। इतना हल्लागुल्ला आसपास! फिर भी शिविर लगा, लोगों को लाभ हुआ। उसके बाद तो शिविर पर शिविर, शिविर पर शिविर लगते चले गये। भारत में स्थान-स्थान पर विपश्यना के केन्द्र बनने लगे। लाखों की संख्या में लोगों ने स्वीकार करना शुरू किया। हर संप्रदाय के व्यक्ति, हर समाज के व्यक्ति, हर परंपरा के व्यक्ति आते हैं; कोई भेदभाव नहीं होता। सबके लिए एक जैसी शिक्षा है।

भगवान बुद्ध की शिक्षा की सबसे विशेष बात जो मुझे समझ में आयी कि यह मनुष्य-मनुष्य में भेदभाव नहीं करना सिखाती। मनुष्य मनुष्य है। मनुष्य का स्वभाव मनुष्य का स्वभाव है, मानव मन मानव मन है। विकार जागता है तो व्याकुल हो जाता है, विकार निकल जाय तो सुखी हो जाता है। भगवान कहते थे –मैं तो वैद्य हूं भाई! तुम रोगी हो, विकारों के रोगी हो। तुम्हारे मन में क्रोध जागता है, वासना जागती है, अहंकार जागता है, राग जागता है, द्वेष जागता है; तुम व्याकुल रहते हो। मेरे पास यह विद्या है। मैं तो वैद्य हूं, यह औषधि है; इसका उपयोग करके देखो, ठीक हो जाओगे। बुद्ध के समय भी कितने लोग ठीक हुए, कितने लोग स्वस्थ हुए! दुनिया का सबसे बड़ा वैज्ञानिक साधना पथ।

जब उनके साहित्य में से गुजरते हैं तो देखते हैं कि उन्होंने किसी संप्रदाय की स्थापना नहीं की। कहीं 'बौद्ध' शब्द का प्रयोग नहीं है। सारे के सारे साहित्य में ५०,००० पृष्ठों का साहित्य है और 'बौद्ध' शब्द नदारद है। न तो अपनी शिक्षा को 'बौद्ध धर्म' कहा, और न अपने अनुयायियों को 'बौद्ध' कहा। शिक्षा को कहा 'धर्म' और अनुयाइयों को कहा 'धार्मिक'। अरे, धर्म तो सबका होता है ना! तो धर्म सिखाया। इस व्यक्ति ने लोगों को धार्मिक बनाया। सारे भारत देश में फैलाया। और उसके बाद लगभग २०० वर्ष बीतते-बीतते एक सम्राट हुआ अशोक। बड़ा क्रूर, इसलिए चण्ड अशोक कहलाया। न जाने कितनों का खून किये उसने। अपनी राज्य लिप्सा के मारे, साम्राज्य लिप्सा के मारे यहां आक्रमण करे, वहां आक्रमण करे। कलिंग में इतने लोगों का खून बहाया कि दिल दहल उठे। फिर होश जागा। उसे कोई एक भिक्षु मिला जिसने समझाया – अरे, क्या कर रहे हो? क्या मिल जायगा इससे? तुम्हें साम्राज्य फैलाना है तो धर्म का साम्राज्य फैलाओ, प्यार का साम्राज्य फैलाओ। यह खून-खराबे का साम्राज्य फैला करके तुमको शांति मिलती है?

नहीं, शांति तो नहीं मिलती। इतने लोगों को दुखी देखता हूं तो मैं भी दुखी होता हूं!

उस भिक्षु ने धर्म की बात समझाई और बदल गया। चण्ड अशोक अब धर्म अशोक हो गया। सही बात समझी, भगवान बुद्ध की शिक्षा समझ में आयी। फिर सुना कि जब तक विपश्यना नहीं कर लें तब तक भगवान बुद्ध की विद्या को पूरी तरह नहीं समझ पायेंगे। पाटलिपुत्र में उसकी राजधानी थी, जिसको आज 'पटना' कहते हैं। वहां से लगभग ३०० दिन तक बाहर रहा। अपनी राजधानी को छोड़ कर चला गया। राज्य की व्यवस्था बहुत अच्छी की थी, वह कायम रही। राज्य-संचालन में कोई दिक्कत नहीं आयी। ३०० दिन तक वहां से चल कर के राजस्थान गया। राजस्थान में बिराटनगर (वैराठ) गया। वहां विपश्यना का एक बहुत बड़ा आचार्य था। उसके पास जाकर विपश्यना सीखी। विपश्यना सीखी तो आंखें खुलीं –अरे, बुद्ध की वाणी ही इतनी मीठी है, इतनी अच्छी है। यह तो धर्मरस चखना सिखाते हैं। बदल गया, एकदम बदल गया।

अब हम भी देखते हैं, जैसे हम में भी बीती, औरों में भी बीतती है। जो भी आते हैं, विपश्यना का शिविर करते-करते बीच में ही ऐसा भाव उठने लगता है –अरे! इसे तो मेरी मां भी करे, इसे तो मेरा बाप भी करे, मेरा भाई करे, मेरी पत्नी करे, मेरा पति करे! ऐसा भाव मन में उठने ही लगता है। क्योंकि चख रहा है, अच्छा लगता है; तो औरों को भी बांटना चाहता है। यह तो देश का सम्राट था। उसने धर्म चखा तो रहा नहीं गया। सारे देश में फैलना चाहिए! सारे देश में...

तो धर्म का पहला शिलालेख उसने वहां बिराटनगर में लिखवाया और फिर सारे देश में शिलालेख लिखवाए। शिलालेखों से धर्म नहीं फैला, धर्म सिखाने वाले आचार्य तैयार किये। धर्म सिखाने वाले मंत्री तैयार किये, धर्मामात्य तैयार किये सारे देश में। एक शिलालेख में लिखता है कि मेरे पहले भी बहुत राजा हुए, बहुत सम्राट

हुए। वे चाहते थे कि उनकी प्रजा सुखी रहे, सब चाहते थे – प्रजा सुखी रहे, मां-बाप की वंदना करे, बड़ों का सम्मान करे, छोटों से प्यार करे, देश में शांति हो। सब चाहते थे। परंतु कोई सफल नहीं हुआ। मैं सफल हुआ।

फिर लिखता है मैं क्यों सफल हुआ? कहता है कि धर्म की वाणी फैलायी, परंतु उससे इतना लाभ नहीं हुआ। लोगों को ध्यान करना सिखवाया, तब सफल हो गया। लोगों में शांति आ गयी। धर्म जाग गया लोगों में।

जब उसे याद करते हैं कि देश में एक ऐसा सम्राट हुआ जो लोक-कल्याण में लग गया। उसने निर्णय किया कि अब कहीं हमला नहीं करेगा और फिर कहीं किसी देश पर हमला नहीं किया। उसने अपने धर्मदूत भेजे। तो एक बड़ा उपकार उस व्यक्ति का कि उसने आसपास के देशों में यहां से ऐसे अरहंत भिक्षु भेजे, जिनके साथ भगवान बुद्ध की वाणी भी गयी और विपश्यना भी गयी। परंतु भारत से भगवान की वाणी भी लुप्त हो गयी और विपश्यना विद्या भी लुप्त हो गयी। बाहर देशों में बची रही। अगर वह बाहर नहीं भेजता और आज बर्मा में कायम न रहती तो वह हमें कैसे मिलती? अतः जैसे भगवान बुद्ध का उपकार मानते हैं कि कितनी कल्याणकारी विद्या एक साइंटिस्ट की भांति खोज निकाली। यह बात तो भारत में पहले से थी कि ये जो इंद्रियां हैं, इंद्रियों के विषय हैं –आंख से रूप दिखता है, कान से शब्द सुनते हैं, नाक से गंध सूंघते हैं, जीभ से रस चखते हैं, शरीर से, त्वचा से कुछ स्पर्श होता है तो मन में अच्छा लगे तो लोभ जागता है, बुरा लगे तो द्वेष जागता है। यह तो भारत की शिक्षा में कायम था, कोई नयी बात नहीं थी। तो उन्होंने क्या ढूंढा?

उन्होंने कहा –नहीं, इन बाहर के आलंबनों को देखकर के, सुन करके, चखकर के तुम राग नहीं जगाते, द्वेष नहीं जगाते। बाहर के आलंबन जब तुम्हारी इंद्रियों को छूते हैं, तब भीतर एक संवेदना होती है, एक सेंसेशन होती है। वह सेंसेशन तुम्हें प्रिय लगती है, तुम राग जगाते हो माने लोभ जगाते हो। अप्रिय लगती है, द्वेष जगाते हो। उस सेंसेशन को जानो, उस संवेदना को जानो। और उसको जान कर के राग जगाना बंद करो, द्वेष जगाना बंद करो तो जड़ों से सुधरेगा स्वभाव। नहीं तो ऊपर-ऊपर का मन सुधर कर रह जायगा। कितनी बड़ी खोज थी यह! मानव समाज के लिए बहुत बड़ी खोज थी।

आज दुनिया में विपश्यना फैल रही है। दुनिया के बड़े-बड़े सायकीयाट्रिस्ट, बड़े-बड़े डॉक्टर्स इस बात को देखकर कहते हैं – जहां फ्राइड ने और जंग ने सायकॉलोजी सिखायी, सायकीयाट्रिस्ट बनाया लोगों को, सायकोथेरेपी सिखायी –अरे, भगवान बुद्ध तो वहां से शुरू करते हैं और किन गहराईयों में गये। हम सोच भी नहीं सकते इतनी गहराईयों में। इतनी गहराईयों में जो व्यक्ति गया, एक वैज्ञानिक की तरह गया। बुद्धिविलास करके नहीं, पुस्तक पढ़कर नहीं, अपने अनुभूति के बल पर। कितनी सच्चाई लोगों के सामने रखी। उनके उपकार को याद करते हैं तब मन कृतज्ञता से भरता है। ऐसा महापुरुष अपने देश में नहीं होता तो सारा विश्व भारत को धर्मगुरु नहीं कहता। उसकी वजह से सारा विश्व भारत को धर्मगुरु कहने लगा।

और फिर बड़ा उपकार अशोक का। वह अगर बुद्ध की शिक्षा बाहर नहीं भेजता, यह विद्या बर्मा नहीं जाती। तो विपश्यना लुप्त हो जाती; नामोनिशान नहीं रह जाता। इसीलिए यह स्तंभ खड़ा किया उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए। यह द्वार खड़ा किया ब्रह्मदेश के उन भिक्षुओं की याद में – जिन्होंने भगवान की संपूर्ण शिक्षा को संभालकर रखा।

२३००-२४०० वर्षों तक सारी वाणी शुद्ध रूप में संभालकर रखी, सारी विपश्यना शुद्ध रूप में बहुत थोड़े-से लोगों ने संभालकर रखी। क्योंकि एक भविष्यवाणी हुई थी यहां। भारत में २४०० वर्ष पहले किसी संत ने एक भविष्यवाणी की थी कि यह जो बाहर जगह-जगह बुद्ध की शिक्षा जा रही है, विपश्यना जा रही है, सब जगह नष्ट हो जायगी। भारत में नामोनिशान नहीं रहेगा, नष्ट हो जायगी। जो स्वर्णभूमि जा रही है, बर्मा को उन दिनों स्वर्णभूमि कहते थे। स्वर्णभूमि इस रत्न को संभाल कर रखेगी, बाकी सब जगह लुप्त हो जायगी। और बुद्ध के २५०० वर्ष पूरे होने पर वहां से यह रत्न वापस आयगा भारत में। और उस समय भारत में इतने समझदार लोग होंगे, जो इसे सहर्ष स्वीकार करेंगे और उसके बाद सारे विश्व में फैलेगा।

यह मान्यता बहुत सत्य है, ऐसा हमारे गुरुदेव भी स्वीकारते थे। बहुत सत्य है। लेकिन मैं सोचता था कि २५०० वर्ष ही क्यों, २४०० वर्ष क्यों नहीं? २६०० क्यों नहीं? २५०० वर्ष में क्या खास बात होगी? और उन्होंने कहा –भारत का ऋण चुकाने के लिए तुम जा रहे हो। अजीब-सा लगता था। लेकिन यहां आने पर देखा कि हर संप्रदाय के लोग खिंचे आ रहे हैं। हम कोई प्रचार नहीं करते, कोई पेपरों में प्रोपगेंडा नहीं होता। जो शिविर करता है, वह कहता है लोगों से – बहुत अच्छा है रे! तू भी करके देख। अपने परिवार वालों से कहता है, अपने मित्रों से कहता है – तू भी करके देख! तू भी करके देख! इसी तरह फैलना शुरू हुआ। लाखों की तादाद में, और बाहर दुनिया में फैलने लगा तो करोड़ों की संख्या में। १३० सेंटर बन चुके। हर वर्ष और बनते ही जा रहे हैं।

और किसी तरह की ध्यान विद्या सिखायी जाती है तो कोई गुरुमहाराज कहते हैं – आओ, आओ, तुम्हारे कान में यह मंत्र देंगे, घर जाकर अभ्यास कर लो। घर जाकर कर लेना आसान है। दस दिन पास रखना और यह विद्या सिखाना कठिन है। सिखाने वाले के लिए भी कठिन। दस दिन! अरे, दस दिन कैसे निकालेंगे? और सिखानेवाला भी दस दिन कैसे व्यवस्था करेगा सब की?

लेकिन किस तरह फैल रही है? आश्चर्य होता है। हमारी वजह से नहीं। कभी मत मान लेना कि गोयन्का की वजह से फैल रही है। धर्म की वजह से फैल रही है। और हमारे गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन की वजह से फैल रही है। जब मैं आया यहां पर, तब १९६९-१९७० में दुनिया में एक हिप्पी कल्ट चल रहा था। बड़े गंदे लोग। वेस्ट से आते थे, लड़के-लड़कियां इतने गंदे। माने गंदे शरीर से ही नहीं, आचरण से भी गंदे। बहुत गंदे। शिविर में आते थे तो सुधार होता था। बात फैलने लगी। उनमें से कुछ कहते थे – हमारे यहां कोम्यून बनाया है, जिनमें लोग रहते हैं और मनमानी करते हैं। चाहे सो करो। केवल पति-पत्नी का संबंध नहीं है। चाहे जैसे रहे, छूट है हमारे यहां।

अरे बाबा, क्या छूट हुई यह? किस तरह का जीवन तुम्हारा? तो उस वक्त एक स्वप्न लिया कि कभी एक ऐसा विलेज, एक ऐसा आदर्श ग्राम बनेगा कि जिसमें केवल विपश्यना करने वाले, शील-सदाचार को पालन करने वाले रहेंगे। एक आदर्श गांव खड़ा होगा। उसे देखकर के जगह-जगह ऐसे गांव बनेंगे और लोगों में सुख फैलेगा, शांति फैलेगी। लोगों को संप्रदाय बदलने की जरूरत नहीं है, शांति आनी चाहिए। आदमी बदलना चाहिए। आदमी का नाम बदलने से कुछ नहीं होता, आदमी बदलना चाहिए। तो इसलिए गुरुदेव के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए यह ग्राम बनाया गया।

यह सारा जो कुछ हो रहा है, कृतज्ञता प्रकट करने के लिए। इस द्वार के नीचे बैठ कर के मन कृतज्ञता से विभोर होता है। अगर उस देश में मुझे यह विद्या नहीं मिलती तो अन्य लोगों की भांति रुपये-पैसे के पीछे भागते फिरता। धन कैसे कमाऊं, धन कैसे संग्रह करूं? प्रतिष्ठा कैसे पाऊं, पद कैसे पाऊं, पॉवर कैसे प्राप्त करूं? सारा जीवन इसी भाग-दौड़ में बीतता। और अब मन कितना प्रसन्न होता है! जहां-जहां ये सैकड़ों लोग, हजारों लोग –दुखियारे आते हैं, सब के चेहरे पर उदासी छायी हुई; दस दिन पूरा होते-होते सब मुस्कराते हुए जाते हैं। और फिर चिट्ठियां आती हैं –मुझ में यह सुधार हो गया, यह सुधार हो गया, मेरा जीवन ऐसा बदल गया, ऐसा बदल गया। शराबी आते हैं, कैसे शराब से निकल गये। गंजेड़ी आते हैं, कैसे गांजे से निकल गये। भंगेड़ी आते हैं, कैसे भंग से निकल गये! जुआरी आते हैं, कैसे जुए से निकल गये! उपदेशों से नहीं, विपश्यना से निकलते हैं।

यह भगवान बुद्ध की बहुत बड़ी खोज थी। साइंटिस्ट मानता हूं उनको। उन्होंने कोई रिलिजन स्थापित नहीं किया। सुपर साइंटिस्ट थे। सबसे बड़ी खोज की उन्होंने। जब किसी को लगता है कि मुझको शराब का व्यसन है, मैं शराब का एडिक्ट हूं। मैं इससे निकलना चाहता हूं। सुना है विपश्यना से निकल जाऊंगा। तब भगवान की इस खोज को याद करके कहता हूं –"अरे, तुझे शराब का व्यसन नहीं है। लगता है शराब का व्यसन है। यह तो अपेरेंट ट्रुथ है, ऐसा लगता है। तुझे शराब पीने पर एक तरह की संवेदना होती है शरीर पर, एक तरह की सेंसेशन होती है, वह प्रिय लगती है और भीतर का मन बार-बार वह संवेदना चाहता है। शराब पीता है तो फिर वह संवेदना आयगी, इसलिए पीता है। शरीर की संवेदना को देखते-देखते इसके प्रति जो आसक्ति है, वह टूटी कि शराब छूटी। और ऐसा होता ही है। एक का नहीं, दो का नहीं, हजारों का हुआ। जुआरियों का जुआ छूटा। हर तरह के विकार वाले लोग कैसे विकार से बाहर निकलते हैं।"

दस दिन में चमत्कार नहीं होता। दस दिन में एक विद्या मिलती है। उसका प्रयोग करते-करते-करते आदमी बदलता है। बहुत बड़ा कल्याण होता है। इसलिए मन कृतज्ञता से भरता है। उपकार मानते हैं बहुत उपकार मानते हैं, उस देश के भिक्षुओं का उपकार मानते हैं, उन्होंने यह विद्या संभाल कर रखी। सम्राट अशोक का उपकार मानते हैं, उसने यह विद्या बाहर भेजी, नहीं तो सारे विश्व से समाप्त हो गयी होती। एक देश ने संभाल कर रखी, बर्मा ने। उसका इतना बड़ा उपकार!

और फिर हमारे गुरुदेव का उपकार कि जिनसे यह विद्या मुझे प्राप्त हुई। धर्म का एक बहुत बड़ा गुण होता है –एक तो यह कि निःस्वार्थ सेवा करो। भगवान बुद्ध की वाणी है –निःस्वार्थ सेवा करो, बदले में कुछ नहीं चाहो। **'पुब्बकारी' –** पहले सेवा करो, मांगो कुछ मत। मांगोगे, चाहोगे तो सेवा सेवा नहीं है। सकाम सेवा है, निष्काम सेवा नहीं है। तो धार्मिक व्यक्ति का एक गुण होता है कि सेवा करें और बदले में कुछ नहीं चाहें।

और दूसरा –कृतज्ञता। कुछ भी प्राप्त हो किसी से, एक वक्त का भोजन भी प्राप्त हुआ तो याद रखे –मैं भूखा था, उस वक्त इस व्यक्ति ने भोजन दिया। उसके प्रति कृतज्ञता का भाव! अरे, जिसने धर्म दिया, जिसने मुक्ति का रास्ता सिखाया, जिसने इसी जीवन में दुखों से मुक्त होने का रास्ता दिया, उसके उपकार को कैसे भूल सकते हैं? इसलिए उसके नाम पर यह विलेज है।

मेरा सौभाग्य है कि मैं उस देश में जन्मा। मेरा सौभाग्य है कि उस देश में मुझे यह कल्याणकारी विद्या मिली। मेरा सौभाग्य है कि मैं मेरे गुरुदेव का माध्यम बना कि जिससे यह भारत में ही नहीं, सारे विश्व में फैली।

इगतपुरी के लोगों को बहुत धन्यवाद देता हूं। इतना सहयोग मिलता है, इतना सहयोग मिलता है यहां पर! इतने लोग यहां के आते हैं और आसपास के इतने लोग आते हैं कि इगतपुरी दुनिया के नक्शे पर आ गया। अमेरिका में जाओ, कि साउथ अफ्रीका में जाओ, कि ऑस्ट्रेलिया जाओ, कि न्यूजीलैंड जाओ; जहां बात होती है विपश्यना की, वहां इगतपुरी। हेडक्वार्टर तो इगतपुरी है। इगतपुरी, इगतपुरी, इगतपुरी...।

कभी इस नगर का नाम सुगतपुरी था। भाषा में अक्सर 'स' का 'ह' हो जाता है; इस प्रकार सुगतपुरी का हुगतपुरी हुआ, हुगतपुरी से इगतपुरी। ऐसा मेरा अनुमान है, मैं दावा नहीं करता। ऐसा मेरा अनुमान है। तो जो भी है, आज सुगत की विद्या, बुद्ध की विद्या यहां से फैल रही है और सारे विश्व में फैल रही है। यहां के लोगों के लिए गौरव की बात है, सारे भारत के लिए गौरव की बात है।

८०० लोगों ने अपना जीवन दिया है, टीचर ट्रेनिंग ली है और जगह-जगह जा कर सिखाते हैं। और हर साल १०-२०-५०, १०-२०-५० टीचर और तैयार होते हैं। मुस्लिम आते हैं, क्रिश्चन आते हैं, यहूदी आते हैं। यहां तो हिन्दू आते हैं, बौद्ध आते हैं, जैन आते हैं, सिक्ख आते हैं; आते ही हैं। उनको तो अपना जैसा लगता ही है। बाहर भी सारे देशों में सब संप्रदाय के लोग इतनी बड़ी संख्या में आते हैं। उनके गुरु आते हैं, उनके आचार्य आते हैं। वे कहते हैं कि यह तो ऐसी विद्या है, जो हमारे समाज में भी फैले, हमारे संप्रदाय में भी फैले। तो सही माने में भारत विश्व गुरु बन रहा है। बहुत शीघ्र ऐसी स्थिति बनेगी कि भारत में ऐसे स्थानों पर दुनिया से लोग आयेंगे और तीर्थ की तरह यहां आकर के, साधना करके अपने को पावन करेंगे।

जैसे यहां से विपश्यी लोग बर्मा, तीर्थयात्रा के लिए जाते हैं। कर्मकांड नहीं है तीर्थयात्रा। जहां-जहां पर संत लोग तपे हैं, उस भूमि की वायब्रेशन इतनी स्ट्रांग हैं, वहां ध्यान करने जाते हैं। सैकड़ों लोगों का समूह जाता है, ध्यान करते हैं। कितना आनंद! वहां की सारी धरती धर्म की तरंगों से भरी हुई है। ऐसे ही भारत पहले से ही पावन देश है। अब विपश्यना से और पावन होगा। विश्व के लोग यहां पर एक टूरिस्ट की तरह नहीं, एक पुजारी की तरह आयेंगे। भारत को पूजने के लिए आयेंगे। खूब मंगल होगा, खूब कल्याण होगा।

आज की धर्म सभा में इस प्रदेश के जो भी लोग आये हैं और जिन्होंने यह विद्या सीखी है, वे इसमें आगे बढ़ें। दस दिन में केवल क, ख, ग शुरू होता है। आगे जा करके २०-दिन का शिविर लगता है, ३० का लगता है, ४५ का लगता है, ६०-दिन का शिविर लगता है; उसमें भी भीड़ लगती है, जगह नहीं दे सकते। और अब ९०-दिन का लगने वाला है। जितनी-जितनी गहराईयों में जाओगे, लंबे समय तक, उतने ही पकते चले जाओगे। खूब कल्याण होगा। जिन्होंने अभी विपश्यना का शिविर नहीं किया है वे इस धर्मगंगा में डुबकी लगा कर लाभान्वित हों।

आज की सभा में जो-जो आये हैं, उनका खूब मंगल हो! उनका खूब कल्याण हो! खूब स्वस्ति हो, मुक्ति हो!

(स.ना.गो.)

‘म्यंमा द्वार’, इगतपुरी

(Myanmar gate)

नूतन वर्षाभिनंदन

हर वर्ष की तरह अनेक साधकों की ओर से दीपावली एवं नव वर्ष के अभिनंदन-पत्र मिले हैं। एक-एक को नव वर्ष की मंगल कामना प्रेषित कर पाने का अवसर नहीं मिल पाया, इसलिए ‘विपश्यना’ पत्रिका के माध्यम से उन्हें तथा अन्य सभी साधक-साधिकाओं को मेरी असीम मंगल मैत्री पहुँचे! नव वर्ष सब के मानस में धर्म की नवज्योत प्रज्वलित करे! दिनोंदिन प्रज्ञा पुष्टतर होती जाय! धर्म धारण करने का मंगलकारी फल प्रभूत हो! प्रभावशाली हो! सब का मंगल हो!

मंगल मित्र,
सत्यनारायण गोयन्का

दोहे धर्म के

जीव डुबकियां खा रहा, भवसागर के बीच।
अहो भाग! गुरुवर मिले, लिया बांह भर खींच॥

अहो भाग्य! सद्गुरु मिले, कैसे संत सुजान!
मार्ग दिखाया मुक्ति का, शुद्ध जगाया ज्ञान॥

सद्गुरु की संगत मिली, जागा पुण्य अनंत।
सत्य धर्म का पथ मिला, करे पाप का अंत॥

सद्गुरु की करुणा जगी, दिया धर्म का सार।
संप्रदाय के बोझ का, उतरा सिर से भार॥

धन्य! धन्य! गुरुवर मिले, ऐसे संत सुजान।
छूटी मिथ्या कल्पना, छूटा मिथ्या ज्ञान॥

गुरुवर! अंतरजगत में, जगी सत्य की ज्योत।
हुआ उजाला, धर्म से, अंतस ओतप्रोत॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा.) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई-४०० ०१८
फोन: २४९३ ८८९३, फैक्स: २४९३ ६१६६
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

सतगुरु तो किरपा करी, दियो धरम रो नीर।
धोयां सरसी आप ही, अपणो मैलो चीर॥

सतगुरु दीनी साधना, धोवण चित्त-विकार।
धोतां धोतां आप ही, खुलै मुक्ति रो द्वार॥

धन्य भाग! सावण मिली, पायो निरमळ नीर।
सतगुरु री होयी क्रिपा, धोवां मैला चीर॥

गुरु तो पंथ दिखाणियो, दीन्यो पंथ दिखाय।
मंजिल आपां पूगस्यां, चाल्यां अपणै पांय॥

घणा दिनां रुळता फिर्‌या, आंधी गळियां मांय।
गुरुवर दीन्यो राजपथ, पाछो मुड़णो नांय॥

अणजाण्या भटकत फिर्‌या, अँधियाळै री रात।
धरम जोत गुरुवर दयी, इब होयो परभात॥

एक साधक
की मंगल कामनाओं सहित

‘विपश्यना विशोधन विन्यास’ के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) २४४०८६, २४४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५४८, मार्गशीर्ष पूर्णिमा, २६ दिसंबर, २००४**

वार्षिक शुल्क रु. ३०/-,विदेश में US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. ५००/-, " US $ 100. **‘विपश्यना’ रजि. नं. १९१५६/७१.** Regn. No. AR/NSK-46/2003-05

Licenced to post w**ithout Prepayment of postage** -- Licence number-- **AR/NSK-WP/3**
Posting day- Purnima of Every Month, Posted at **Igatpuri-422403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
दूरभाष : (०२५५३) २४४०७६
फैक्स : (०२५५३) २४४१७६
Website: www.vri.dhamma.org
e-mail: info@giri.dhamma.org